ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2020; 6(9): 124-129
www.allresearchjournal.com
Received: 10-07-2020
Accepted: 15-08-2020

डॉ. अमित कुमार गुप्ता
सहायक प्रध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग
गुरु घासीदास विश्वविद्यालय
बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत

डॉ. राम बाबू
सहायक प्रध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग
गुरु घासीदास विश्वविद्यालय
बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत

Corresponding Author:
डॉ. अमित कुमार गुप्ता
सहायक प्रध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग
गुरु घासीदास विश्वविद्यालय
बिलासपुर, छत्तीसगढ़, भारत

भारत में खाद्य नीति की ऐतिहासिक विकास का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. अमित कुमार गुप्ता, डॉ राम बाबू

सारांश
भारत में खाद्य नीति का विकास कई महत्वपूर्ण सन्दर्भों के अंतर्गत हुई है, इन संदर्भों में प्रमुख रूप से देश में कुपोषण, गरीबी, जीवनयापन के स्तर का आभाव, तथा भूख की समस्यायें रही है। देश की संसद ने वर्ष 2013 में खाद्य सुरक्षा अधिनियम पारित कर देश में समस्त नागरिकों के भोजन के अधिकार को वैधानिकता प्रदान करती है, हालाँकि की देश की खाद्य नीति का इतिहास बहुत पुराना है, इसकी जड़ें ब्रिटिश शासन के दौरान वर्ष 1939–42 में खोजी जा सकती है। इस शोध प्रत्र का उद्देश्य भारत की खाद्य नीति के एतिहासिक विकास का विवेचनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन करना है। इस शोध प्रत्र में अध्ययन की दृष्टी से तथ्यों का संकलन द्वितीयक स्त्रोंतो से किया गया है। जिसके तहत भारत सरकार के शासनादेश, समाचार पत्रों इत्यादि प्रतिवेदनों से तथ्यों का संकलन किया गया हैं।

मूलशब्दः खाद्य सुरक्षा अधिनियम, खाद्य नीति, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, भारत

प्रस्तावनाः
भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली को देश की खाद्य नीति के रूप में जाना जाता हैं। इस प्रणाली के तहत राष्ट्रीय स्तर एवं क्षेत्रिय स्तर पर खाद्य सुरक्षा के तहत खाद्यान्नों की उपलब्धता बनाये रखने हेतु किसानों से खाद्यान्नों को न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीदी करने, खाद्यान्नों के बफ्फर स्टाक बनाये रखने तथा उसके मूल्यों में स्थिरता लाने का कार्य किया जाता हैं। व्यक्तिगत एवं हाउसहोल्ड स्तर पर खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले परिवारों को किफायती दर पर उचित दर की दुकानों के माध्यम से खाद्यान्नों का वितरण किया जाता हैं, ताकि कुपोषण एवं गरीबी जैसी गम्भीर समस्या के निस्तारण हेतु सभी के लिए आवश्यक आहार को ध्यान में रखते हुए खाद्य सुरक्षा को भोजन के अधिकार के रूप में सुनिश्चित किया जा सके।
सार्वजनिक वितरण प्रणाली प्रमुख रूप से केन्द्रीयकृत योजना हैं, जो केंद्र और राज्य सरकार के समन्वय से चलाई जाती है। इसके तहत, अनाज खरीदने और उसे भारतीय खाद्य निगम के प्रमुख केन्द्रों तक ले जाने के लिए केन्द्रीय सरकार जिम्मेदार हैं, जबकि गरीबी रेखा के नीचे रह रहे परिवारों की पहचान करने, और उनको विशेष राशन कार्ड जारी करने तथा समाज के कमजोर वर्गो तक अनाज का वितरण उचित दर की दुकानों के माध्यम से करने के लिए राज्य सरकारें जिम्मेदार हैं।
अतएव भारत में खाद्य–नीति के निर्माण की प्रक्रिया को विस्तृत रूप से समझने, इसके संस्थात्मक के विकास तथा नीति की कार्यात्मक प्रक्रिया को समझने के लिए, हमें खाद्य–नीति की एतिहासिक विकास की पृष्ठभूमि पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता हो जाती हैं।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य सुरक्षा की अवधारणा
अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य सुरक्षा की व्यापक अवधारणा का विकास वर्ष 1974 से 1996 तक के 25 वर्ष के लम्बे अन्तराल के व्यापक बहस के उपरान्त हुआ, जिसका उल्लेख संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य और कृषि संगठन और विश्व बैंक के प्रतिवेदनों में किया गया हैं। हालाँकि खाद्य–सुरक्षा की व्यापक अवधारणा का उल्लेख विश्व खाद्य परिषद के द्वारा वर्ष 1996 में किया गया। इस अवधारणा के अनुसार, खाद्य–सुरक्षा से तात्पर्य यह हैं, कि ″जब सभी व्यक्तियों को हर समय उनके स्वस्थ जीवन तथा उनकी पसन्द के अनुसार पर्याप्त मात्रा में, सुरक्षित और पौष्टिक आहार की पँहुच शारीरिक और आर्थिक रूप से सुनिश्चित हो″ (एफएओ, 1996, एफएओ, डब्लूएफपी, आईएफएडी, 2012) । हालाँकि खाद्य–सुरक्षा की अवधारणा में सभी व्यक्तियों को पर्याप्त एवं पोषित–आहार की शारीरिक

और आर्थिक रूप से पँहुच के साथ–साथ सामाजिक रूप से सुनिश्चित करने की मांग स्टेट फूड सिक्यूरिटी–2001 में की गयी। वर्ष 1996 में हुई विश्व खाद्य परिषद की सम्मेलन में खाद्य–सुरक्षा की अवधारणा को निम्नलिखित रूप से चार–स्तर पर व्यक्त किया गया, जिसमें खाद्यान्नों की व्यक्तिगत या हाउसहोल्ड्स स्तर, क्षेत्रिय स्तर, राष्ट्रीय स्तर, तथा वैश्विक स्तर पर आसानी से पहुँच बनाया जा सके (डब्लूएफसी, 1996)"।

इस सम्बन्ध में, विश्व खाद्य परिषद के द्वारा खाद्य सुरक्षा बनाये रखने के लिए चार आयामों को उल्लेखित क्या गया, इन आयामों में मुख्य रूप से खाद्यान्नों की उपलब्धता (अवैल्बिलिटी), पहुँच (एक्सेसिबिलिटी), उपयोगिता (यूटिलाइजेशन) तथा स्थिरता (स्टेबिलिटी) (जिन पर खाद्य सुरक्षा की अवधारणा निर्भर करती हैं) को माना गया। खाद्य सुरक्षा की अवधारणा सिर्फ इन आयामों तक ही सीमित नहीं रही हैं, इसके कई अन्य आयाम भी बहुत ही गहराई से जुडी हुई हैं। 1986 के बाद वैश्विक स्तर पर गरीबी, कुपोषण और भुखमरी की समस्या पर विश्व बैंक की प्रतिवेदन में चिंता व्यक्त करते हुए खाद्य सुरक्षा की परिभाषा को पुनः परिभाषित किया गया, जिसमें व्यक्तिगत या हाउसहोल्डस स्तरों के साथ क्षेत्रिय और राष्ट्रीय स्तर पर भी खाद्य–सुरक्षा की मांग को स्वीकार किया गया। यह अवधारणा आमर्त्य सेन (1981) द्वारा बंदोबस्ती (हकदारी) की अवधारणा के सनिकट थी, अतएव इस अवधारणा से प्रेरित होकर बाद में खाद्य सुरक्षा की अवधारणा को व्यक्तिगत तथा हाउसहोल्ड स्तर पर खाद्यान्न की हकदारी (एंटाइटलमेंट) व्यवस्था के रूप में बल दिया हैं।

संक्षेप में, विश्व में खाद्य–सुरक्षा की अवधारणा के आरम्भिक विचार–विमर्शों में खाद्यान्नों की आपूर्ति की समस्या के निस्तारण हेतु बुनियादी खाद्यान्नों की उपलब्धता को सुनिश्चता करने के साथ–साथ कुछ हद तक आवश्यक वस्तुओं की कीमतों के उतार–चढ़ाव में स्थिरता लाने पर विशेष बल दिया गया था। हालाँकि 1970 के दशक के मध्य से अकाल, भुखमरी, गरीबी और खाद्य–संकट जैसे मुद्दों का बड़े पैमाने पर अध्ययन किया जाने लगा। इस प्रकार समय–समय पर खाद्य–सुरक्षा की अवधारणा को आवश्यकता अनुसार कई बार पुनः परिभाषित करने का प्रयास किया गया। 1990 के मध्य में व्यक्तिगत स्तर तक से लेकर वैश्विक स्तर पर खाद्य–सुरक्षा को एक व्यापक मुद्दे के रूप में पहचान की गयी, हालाँकि अब खाद्यान्नों की पर्याप्त मात्रा में पहुँच बनाये रखने की बात स्वीकार किया गया, ताकि कुपोषण की समस्या के निस्तारण के लिए पोषित–प्रोटीन युक्त खाद्यान्नों की पहुँच स्वस्थ और सक्रिय जीवन के लिए वैश्विक स्तर पर सुनिश्चित किया जा सके (एफएओ, 1996, एफएओ, डब्लूएफपी, आईएफएडी, 2012)।

भारत में खाद्य नीति

खाद्य नीति का अध्ययन लोकनीति के तहत किया जाता है, जिसमें देश के सभी नागरिकों के लिए खाद्य सुरक्षा की नीति को सुनिश्चित करने, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर खाद्य–अर्थव्यवस्था को सुचारों बनाने के उद्देश्य से खाद्यान्नों के उत्पादन, खरीदी, बफ्फर स्टॉक बनाने, विपणन (मार्केटिंग) और वितरण से संबन्धित, खाद्य नीति का निर्माण एवं कार्यान्वयन सरकार एवं सरकारी संस्थाओं के द्वारा किया जाता हैं तथा इसी व्यवस्था के अंर्तगत खाद्य और कृषि व्यवस्था को निर्धारित किया जाता हैं। जिसमें नीति–निर्माण उत्पादन एवं प्रसंस्करण तथा तकनीकी विपणन (मार्केटिंग), खाद्यान्नों के उपलब्धता एवं उपभोग से सम्बन्धित नीतियों का निर्धारण किया जाता हैं। ताकि इसके कार्यान्वयन के उपरांत सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सके। खाद्य नीति की विवेचना कई स्तरों पर की जा सकती है, क्षेत्रिय व वैश्विक स्तरों पर तथा सरकारी एजेन्सियों, व्यापार या संगठन के स्तरों पर तथा व्यक्तिगत या परिवार के स्तरों पर। खाद्य नीति–निर्माता कई क्रियाकलापों में संलग्न रहते है, जैसे–खाद्य से सम्बंधित व्यापार, गरीबों के लिए खाद्यान्नों का वितरण के लिए अहर्ता निर्धारित करना व उनको खाद्यान्नों की किफायती दर पर आपूर्ति सुनिश्चित करना, खाद्य लेबलिंग इत्यादी से सम्बंधित नीतियों की निर्धारित करना। इस शोध में खाद्य नीति के तहत सार्वजनिक वितरण प्रणाली के वितरण पक्ष को ही शोध के अध्ययन का केन्द्रीय विषय–वस्तु के रूप में लिए गया।

भारत में खाद्य–नीति का विकास समय की कई घटनाओं के परीक्षणों के माध्यम से हुआ है, इनमें प्रमुख रूप से– पहली घटना 'तत्कालीन समय की परिस्थितिया थी' अर्थात इस दौरान विश्व को द्वितीय विश्व युद्ध का सामना करना पड़ा था। दूसरी प्रमुख घटना 'अकाल' की थी, जिसके कारणवश कई लाख लोगों की मृत्यु हुई। इसके अलावा अन्य घटनाएँ, जैसे कि देश के कई राज्यों में समय–समय पड़ने वाली सूखे की स्थिति, जिससे खाद्यान्न की कमी होने के कारण से खाद्यान्न के मूल्यों में अचानक वृद्धि होने लगी तथा इसके साथ ही निरन्तर बढती हुई देश की आबादी, इत्यादी अन्य घटनायें शामिल हैं। जिससे एक समान और बडे पैमाने पर सभी व्यक्तियों के लिए भोजन की समस्या एक प्रकार से चुनौतीपूर्ण स्थिति में सामने खड़ी होने लगी। खाद्य असुरक्षा की इस स्थिति का देश को स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त भी सामना करना पड़ा था। अतएव देश की विभिन्न सरकारों द्वारा खाद्य–असुरक्षा की इस स्थिति को दूर करने लिए समयानुकूल आवश्यक महत्वपूर्ण निर्णय लिये गये हैं, इसके लिए चाहे वो स्वतन्त्रतापूर्व ब्रिटिश सरकार हो या स्वतंत्रता के बाद से लेकर अब तक की वर्तमान की सरकारें हो।

भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के एतिहासिक विकास में वर्ष 1939 से लेकर 1943 का समय बहुत ही महत्वपूर्ण रहा हैं, क्योंकि इस अवधि में कई ऐसी महत्वपूर्ण घटनाएँ घटित हुईं, जिन्होंने भारत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली के स्थापना की नीवं रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इनमें प्रमुख रूप से, पहली घटना 'तत्कालीन समय की परिस्थितियां' प्रमुख रूप से थी। 15 अगस्त, 1947 से पूर्व, भारत पर ब्रिटिश सरकार का आधिपत्य था और वर्ष 1939 से लेकर 1945 तक की इस अवधि के दौरान विश्व ने द्वितीय विश्व युद्ध का सामना किया था। द्वितीय विश्व युद्ध में ब्रिटेन युद्धरत राष्ट्रों में से एक था, और इसलिए युद्धरत सशस्त्र बलों के लिए खाद्यान्न की मांग बढ़ने लगी। इस घटना के साथ ही भारत में खाद्यान्न की कमी होने के साथ खाद्यान्न की जमाखोरी होने लगी, जिससे खाद्यान्नों के मूल्य में तेजी से वृद्धि होने लगी। वर्ष 1942 में बर्मा के पतन के बाद, बर्मा से बड़ी मात्रा में होने वाले खाद्यान्न का आयात बंद होने से, उपरोक्त स्थिति और भी खराब हो गयी।

दूसरी प्रमुख घटना 'अकाल' की थी, जिसके परिणामस्वरुप वर्ष 1943 में तत्कालीन बंगाल और उसके आस–पास के प्रान्तों के कुछ हिस्सों में कई लाख लोगों की मृत्यु हो गयी। इस अकाल से सिर्फ बंगाल में ही मरने वाले लोगों की संख्या लगभग 15 से 30 लाख तक पँहुच गयी थी (सेन, 1981, पेज–52–85; उद्धृत–मूइज, 1998 में) । अतएव, द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भारत में खाद्य–संकट एक गम्भीर समस्या बनकर उभरी। इस तरह द्वितीय विश्व युद्ध होने के कारण तथा इसी अवधि में बंगाल और उसके आस–पास के प्रान्तों में पडे अकाल की वजह से देश में खाद्यान्न की कमी होने के कारण तथा खाद्यान्न की जमाखोरी होने से इसके मूल्यों में वृद्धि होने लगी। अतः इसके कारण, पहली बार देश के लिए खाद्य–नीति की जरूरत महसूस हुई, क्योंकि भारत को न तो किस तरह की खाद्य–राशनिंग (खाद्य वितरण, बफ्फर स्टॉक) का ही और न ही किसी भी अन्य प्रकार से खाद्य–नियंत्रण का ही अभी तक कोई अनुभव था। इसकी मुख्य वजह को इस प्रकार से समझा जा सकता हैं, कि वर्ष 1861 के समय से ही तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने 'अहस्तक्षेप की नीति' को ग्रहण किया था, इस नीति को स्वीकार करने की वजह से तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने व्यापार के साथ खाद्यानों के मूल्यों

की वृद्धि कम करने के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से हस्तक्षेप करने से परहेज समझा (भाटिया, 1991 पेज–331, उद्धृत–मूइज, 1998 में) ।

वर्ष 1939–43 के समयकाल में पहली बार खाद्य–नीति बनाई गयी, इसके सम्बन्ध में वर्ष 1939 से लेकर 1942 में खाद्यान्नों के मूल्यों में हो रही वृद्धि को लेकर कई 'मूल्य नियंत्रक सम्मेलन' का आयोजन किया गया। सितम्बर, 1942 में आयोजित 'छठी मूल्य नियंत्रक सम्मेलन' में खाद्यान्नों की केंद्रीयकृत खरीदी के लिए पहली बार योजना बनाई गयी तथा इसी सम्मेलन में पहली बार सार्वजनिक वितरण प्रणाली के बुनियादी सिद्धांतो को भी निर्धारित किया गया। इस प्रक्रिया में, एक केन्द्रीय सरकारी संगठन की स्थापना करने का प्रावधान किया गया, जो अधिशेष (Surplu) उत्पादन करने वाले प्रान्तों से खरीदी (Pracurment) कर कमी वाले (Deficit) प्रान्तों को आवंटित करने के लिए निर्धारित किया गया, जो बड़े शहरों और औद्योगिक शहरों को उचित दर की दुकानों और कॉपरेटिव सोसाइटी के द्वारा खाद्यान्नों का वितरण करते थे। इसके लिए दिसम्बर 1942 में, एक अलग खाद्य–विभाग की स्थापना की गयी। जिसे वर्ष 1943 में, पूरे भारत के लिए खाद्य–नीति के निर्माण के लिए 'मूल–योजना' (Basic Plan) तैयार करने की जिम्मेदारी दी गयी (मूइज, 1985)।

इस मूल–योजना के मुख्य बिंदु निम्न प्रकार से थे– खाद्यान्न की खरीदी, संविदा पर खरीदी के लिए एजेंड, योजना के अंतर्गत आवंटित खाद्यान्नों की आपूर्ति का वितरण, वित्त और जिला प्रशासन। इस नीति का मुख्य उद्देश्य खाद्य–मूल्य को स्थिर करना था।

वर्ष 1942–43 के समय महंगाई, ब्रिटिश सरकार के सामने एक बहुत बडी चुनौती बन कर उभरी जिसके कारण खाद्यान्नों की मूल्य में तेजी से वृद्धि हो गयी। इस उपरोक्त स्थिति की वजह से न सिर्फ बंगाल बुरी तरह से प्रभावित हुआ बल्कि बम्बई (मुम्बई) और मद्रास (चेनई) जैसे औद्योगिक शहरों भी प्रभावित हुए। वर्ष 1943 में खाद्य–नीति आयोग ने, 1 लाख से अधिक आबादी वाले शहरी क्षेत्रों में राशनिंग सेवा को शुरू करने की सिफारिश की थी (मूइज, 1998 , सुब्बाराव, 2010)। इस समिति ने इस बात पर भी बल दिया, कि "प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन के हिसाब से 1 पाउंड तक का आनाज वितरित किया जाये, भले ही इसके लिए खाद्यान्नों का आयात क्यों न करना पड़े" (मूइज, 1998)। इस प्रकार से हम उपरोक्त स्थिति से समझ सकते हैं, कि वर्ष 1939 से पूर्व तक तत्कालीन ब्रिटिश सरकार के पास न कोई खाद्य–नीति की थी, जो खाद्यान्न के मूल्यों में हो रही वृद्धि को कम कर सके और न ही आपातकाल के समय में खाद्यान्न की होने वाली कमी को उचित समय रहते हुए तथा इन सब स्थितियों को दूर करने के लिए किसी भी प्रकार की बफ्फर–स्टॉक की कोई व्यवस्था थी। द्वितीय विश्व युद्ध के समय में बनी, पहली खाद्य–नीति मूलतः शहरी औधोगिक क्षेत्रों के निवासियों, सैन्य और नागरिक सुरक्षा में कार्यरत रहने वाले परिवारों पर ही विशेष रूप से ध्यान में रखकर बनाया गया था। इस नीति से ग्रामीण क्षत्रों के निवासियों जैसे खेतिहर मजदूरों, मछुहारों, परिवहन कर्मचारियों और अन्य लोगों को दूर रखा गया था।

द्वितीय विश्व–युद्ध उपरान्त भी खाद्यान्न का वितरण और खरीदी की नीतियाँ कुछ समय के लिए इसकी स्थिति अभी तक अनिश्चित रूप से चलती रही, क्योकिं इस दौरान भी खाद्यान्न का उत्पादन अपर्याप्त था। खाद्यान्न का और–अधिक उत्पादन बढ़ाने के लिए किसी प्रकार का सफल प्रयास तत्कालीन सरकार द्वारा अभी तक नहीं किया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, देश को ब्रिटिश शासन से आजादी मिलने के साथ–साथ विभाजन का सामना करना पड़ा और इसके परिणामस्वरुप, भारत के हिस्सें में कुल आवादी का 82 प्रतिशत, अनाज उत्पादन का 75 प्रतिशत और सिंचित क्षेत्र का 69 प्रतिशत भाग ही आया और इस स्थिति के कारण से देश में खाद्यान्न की स्थिति अच्छी नहीं थी (चोपड़ा, 1988य पृष्ठ 61)।

स्वतंत्रता उपरांत देश की खाद्य नीति की स्थिति

वर्ष 1947–52 के, पहले दशक के दौरान भी देश के पास खाद्य–नीति को लेकर कोई सुव्यवस्थित योजना नहीं थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, भारत सरकार के विभिन्न प्रयसो को अलग–अलग काल में बांटा जा सकता है। वर्ष 1947 में, खाद्य–नीति समिति ने सिफारिश करते हुए कहा, कि अल्पसमय में घरेलू–उत्पादन में वृद्धि करने की जरुरत पर बल दिया जाना चाहिए तथा दूसरे देशों से होने वाले आयात की निर्भरता को भी धीरे–धीरे कम करने के साथ, खाद्यान्नों की बफ्फर–स्टॉक को बढाने और उपभोक्ता के प्रति सरकार की प्रतिबद्धताओं को कम करने पर बल दिया जाना चाहिए। तद्पश्चात वर्ष 1947 के दिसम्बर माह में तत्कालीन सरकार ने, महात्मा गाँधी के आदर्शों के प्रभाव में 'विनियंत्रण की नीति' की घोषणा किया गया। हालाँकि, यह नीति अल्पकालिक थी। सितम्बर, 1948 में, सरकार ने खाद्यान्नों के मूल्यों के ऊपर नियंत्रण रखने, खाद्यन्नों की खरीदी करने तथा शहरी क्षेत्रों और अन्य खाद्यान्नों के कमी वाले क्षेत्रों में खाद्य–नीति को पुनः शुरू किया।

लेकिन वर्ष 1951 से लेकर वर्ष 1954 के दौरान तक देश की अर्थव्यवस्था अल्पविकसित होने के कारण तत्कालीन सरकार ने एक ऐसी खाद्य–नीति बनाने पर बल दिया, जो सामाजिक सुरक्षा को ध्यान में रखकर बनाई हो और इसके लिए सरकार ने एक बार पुनः 'विनियंत्रण नीति' को फिर से शुरू किया। उस समय ऐसी आशंका व्यक्त की गयी थी, कि देश के विकास के लिए होने वाले विदेशी निवेश ऐसी खाद्य–नीति से सीधे प्रभावित हो सकती हैं, और इस कारण से तत्कालीन खाद्य–नीति के सन्दर्भ में सरकार की खाद्य–नियंत्रण योजना सिर्फ जरूरतमंद शहरी और ऐसे क्षेत्रों तक ही सीमित थी, जो खाद्यान्न के कम उत्पादन होने से बहुत अधिक प्रभावित थे। दूसरी पंचवर्षीय में खाद्य के आरक्षित मूल्यों में होने वाले उतार–चढ़ाव पर नियंत्रण रखने, और आपातकाल की स्थिति में खाद्यान की मांग बढने की स्थिति में खाद्यान्न के वितरण पर जोर दिया गया (योजना आयोग, 1956)।

वर्ष 1955 'आवश्यक वस्तु अधिनियम' अस्तित्व में आया। यह अधिनियम, आवश्यक वस्तुओं के एक समान वितरण के लिए सरकार को खाद्यान्न के उत्पादन, आपूर्ती व वितरण और इसके व्यापार को विनियमन (Deregulate) करने की शक्ति प्रदान करती हैं। 1955 का अधिनियम, स्वंतन्त्र भारत का पहला अधिनियम था, जो खाद्यान्न के व्यापार और वितरण को नियंत्रित करने के उद्देश्य से लिए लागू किया गया था क्योंकि खाद्यान्न के व्यापार और वितरण को विनियमित करने के लिए ब्रिटिश सरकार के शासनकाल में आवश्यक आपूर्ति (अस्थाई रूप से) अधिनियम, 1946 विधि–निर्मित किया गया था, जिसका स्थान आगे चल कर आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 ने लिया (मूइज, 1999, पृष्ट–193 उद्धृत– मजूमदर, 2009, पेज–4) । 1957 में खाद्यान्न के मांग और आपूर्ति के बीच बड़ी खाई उत्पन होने के कारण सरकार को 1951–54 के समय शुरू हुई, नियंत्रण की नीति को बदल कर पुनः विनियंत्रण की नीति अपनानी पड़ी।

इस दौरान वर्ष 1957 में गठित, खाद्यान्न जाँच समिति–1957 ने एक लचीला और अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रण की नीति की बात करते हुए सरकार से और–अधिक उचित दर की दुकाने खोलने तथा जोनल–नीति को चलते हुए निरन्तर खाद्यान्न की उत्पादन के अधिशेष वाले जोनल–क्षेत्रों से कमी वाले जोनल–क्षेत्रों को साथ–साथ लाकर प्रत्येक जोनल में खाद्यान्न के मूल्यों को नियंत्रित करने की सिफारिश की थी (भारत सरकार, 1957) । वर्ष 1957 में भारत सरकार ने एक बार पुनः खाद्य नीति में सुधार लाते हुए पुनः नियंत्रण की नीति की शुरुआत किया।

वर्ष 1958–66 के दौरान भारत ने अन्य देशों से खाद्यान्न का आयात किया, इनमे से अधिकांशतः अमेरिका से पब्लिक लॉ–480 के अधीन विशेष रूप से गेंहू का आयात किया। अमेरिका ने पब्लिक लॉ–480 से प्रेरित हो कर (जोकि उसकी तत्कालीन विदेश नीति का हिस्सा था), भारत के सामने अपनी मुद्रा (डॉलर) में मूल्यांकन कर भुगतान करने, विदेशी व्यापार व खाद्यान्न की उत्पादन, और उर्वरक के वितरण पर अंतिम मिनट पर शर्त रख कर भारत को होने वाले गेंहू के आयात पर रोक लगा दी थी (मूइज,1998; सुब्बा राव, 2010) । इस दौरान वर्ष 1966 में, खाद्यान्न का आयात देश में उपलब्ध खाद्यान्न के 14 प्रतिशत तक पहुँच चुका था, इसकी मुख्य वजह 1964–66 के दौरान खाद्यान्न के घरेलू–उत्पादन में संकट को माना जा सकता हैं (सुब्बा राव, 2010)।

वर्ष 1965 में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की संस्थात्मक प्रबंधन में बदलाव आया। वर्ष 1965 में, देश की संसद के द्वारा भारतीय खाद्य निगम की स्थापना (एफसीआई) की गयी। जो एक स्वायत संस्था के रूप में कार्य करता हैं, जिसका मुख्य काम एक वाणिज्य संस्था के रूप में कार्य करना हैं, जैसे– खाद्यान्न की खरीदी करना, बफ्फर–स्टॉक को बनाये रखना, सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत होने वाले खाद्यान्न के वितरण के लिए राज्यवार आवंटन करना और अनाजों की बिक्री के लिए परिवहन आदि की व्यवस्था करना था। वर्ष 1965 मे ही, किसानों से 'उचित–दर' पर खाद्यान्न की खरीदी करने और खाद्यान्न का उचित–मूल्य निर्धारण करने के लिए कृषि मूल्य आयोग की स्थापना किया गया। जिसे वर्तमान में 'कृषि लागत तथा मूल्य आयोग' (सीएसीपी) के नाम से जाना जाता हैं। राष्ट्रीय कृषि आयोग ने किसानों से खाद्यान्न की खरीदी करने के लिए 'न्यूनतम समर्थन मूल्य' की सिफारिश की, जो किसानों के लिए निष्पक्ष होना चाहिए तथा यह उसके उत्पादन की लागत को भी कवर करें तथा किसान को उसके लाभ का उचित मार्जिन दिला सकें।

वर्ष 1967–68 के दौरान, हरित–क्रांति के बाद की अवधि में घरेलू खाद्य–उत्पादन और खाद्य–प्रबन्धन क्षेत्र में एक नया आयाम आया, क्योंकि इसकी वजह से देश खाद्य–उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बन सका तथा खाद्यान्न के मामले में विदेशी सहायता के साथ विदेशों से होने वाले खाद्यान्न के आयात की निर्भरता भी धीरे–धीरे कम होने लगी। वर्ष 1966 में, उचित दर की दुकानों के कार्यों की समीक्षा करने हेतु वी० एम० दांडेकर की अध्यक्षता में एक विशेष दल का गठन किया गया। इस दल ने अध्ययन में "उचित दर की दुकान (एफपीएस) के माध्यम से आयती खाद्यान्न की आपूर्ति खाद्यान्न की बढती मांग को पूरा करने में अपर्याप्त साबित हुई हैं" पाया।

अतः इस दल ने अपनी प्रतिवेदन में सिफारिश करते हुए कहा कि "उचित दर की दुकानों में खाद्यान्न के मूल्य का निर्धारण बाजार उन्मुख होना चाहिए और इन्हे बाजार में अपनी हिस्सेदारी भी बढ़ानी चाहिए। वर्ष 1966 में गठित, खाद्य–नीति समिति ने जोनल प्रतिबन्ध पर आधारित, बडे शहरी क्षेत्रों में आधिकारित राशन के वितरण की शुरुआत व खाद्यान्न की खरीदी पर गहनता, बफ्फर–स्टॉक का निर्माण और अंतर–राज्यीय व्यापार में भारतीय खाद्य निगम (एफसीआई) की एक महत्वपूर्ण भूमिका पर आधारित एक राष्ट्रीय खाद्य बजट की सिफारिश की।

वर्ष 1960 तक सार्वजनिक वितरण प्रणाली, एक अस्थाई कार्यक्रम की तरह बिना कोई स्पष्ट भूमिका के पूरे देश में निरन्तर कार्य करती रही। हालाँकि यह प्रणाली पूर्व में सिर्फ शहरी क्षेत्रों के उपभोक्ताओं तक ही खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करते हुए खाद्यान्न के मूल्यों में होने वाली वृद्धि पर लगातार नियन्त्रण स्थापित करने का प्रयास करती रही हैं।

वर्ष 1969 के चौथे पंच–वर्षीय योजना के तहत सार्वजनिक वितरण प्रणाली के नये दौर की शुरुआत हुई। इस योजना के तहत, सार्वजनिक वितरण प्रणाली को नियमित रूप से चलने की आवश्यकता महसूस किया गया जो विशेषकर देश के ग्रामीण लोगों तक मदद पहुँचाने के तहत खुले बाजार में खाद्यान्न की बढती कीमतों पर कुछ हदतक नियंत्रण स्थापित करने में सहायता करें। वर्ष 1970–80 के दशक में, सार्वजनिक वितरण प्रणाली का अत्यधिक निर्धनता (Streamlim poverty) वाले जनजातीय ब्लाकों और क्षेत्रों तक ही वितरित किया जाता था।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980–85) में अन्य बातों के साथ सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) भी शामिल था। इस पंचवर्षीय योजना में यह विचार किया कि "आज के बाद खाद्यान्न के मूल्य–नियंत्रण और इसकी कीमतों में उतार–चढ़ाव को कम करने और आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं का एक समान वितरण के लिए एक स्थिर और स्थाई रणनीति विकसित किया जायेगा" तथा इस छठी पंचवर्षीय योजना में वितरण प्रणाली के लिए अनिवार्य वस्तुएं का चुनाव करने हेतु चयन सम्बन्धी दृष्टीकोण अपनाने तथा उनकी अनिवार्यता का निर्धारण करने के लिए भिन्न–भिन्न क्षेत्रों की जरुरत को देखते हुए लचीला रुख अपनाने पर जोर दिया गया ताकि आम आदमी की जरुरत को देखते हुए खाद्यान्न, चीनी, खाद्य तेल, कोयला, मिट्टीतेल, कण्ट्रोल का कपड़ा, चाय, काफी, नहाने का साबुन तथा कपडे धोने का साबुन, माचिसें, और बच्चों के लिए कापियाँ अनिवार्य वस्तुएं समझी जाती थी। परन्तु इनमे से केवल सात वस्तुएं को ही केन्द्र सरकार ने अनिवार्य वस्तु सीमा के अन्तर्गत रखा था। इन अनिवार्य वस्तुएं में प्रमुख रूप से गेंहू, चावल, चीनी, आयतित खाद्य तेल, मिट्टी का तेल, कोयला तथा कण्ट्रोल का कपड़ा थी। जो उस समय में सार्वजनिक वितरण प्रणाली की प्राण–तत्व थी, तत्कालीन समय की परिस्थितियों और स्थानीय जरुरत को देखते हुए अनिवार्य वस्तुओं की कोई मानक सूची रखने की आवश्यकता नही समझा गया, अतः इस कारण से राज्य सरकारें, अपनी जरुरत को देखते हुए इन सातों वस्तुओं के मूल्यों में भी वृद्धि कर सकती थी (योजना आयोग, 1980–85)।

सातवीं योजना के तहत, सार्वजनिक वितरण प्रणाली के विस्तार को नये 20 सूत्रीय कार्यक्रम में महत्वपूर्ण कार्य बताया गया तथा इस प्रणाली को न्यूनतम आवश्यक कार्यक्रम में शामिल करते हुए राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति का प्रयास किया गया तथा अब तक जिन क्षेत्रों को इस योजना का लाभ नही पहुँच पाया उन क्षेत्रों में उचित दर की दुकानों की संख्या बढाने तथा दूरस्थ क्षेत्रों के लिए मोबाइल (चलती–फिरती) उचित दर की दुकानों की व्यवस्था करने पर विशेष जोर दिया गया था। इस दौरान, उचित दर की दुकानों की संख्या जो जनवरी, 1979 में 2.39 लाख थी, जिसे जनवरी, 1985 में बढ़कर 3.15 लाख हो गयी थी (योजना आयोग, 1985–90) ।

आठवीं पंचवर्षीय योजना में समाज के गरीब और कमजोर वर्गों पर ध्यान देते हुए पूर्ण केन्द्रीयकृत सार्वजनिक वितरण प्रणाली की शुरुआत कर खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने बल दिया गया तथा केंद्र सरकार द्वारा दिए जाने वाली खाद्य सब्सिडी को सिर्फ समाज के कमजोर वर्ग को देने की बात करते हुए खाद्य सब्सिडी कम करने की बात कही गयी (योजना आयोग, 1992–97)।

पुनर्गठित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (आर० पी० डी० एस०)

जून, 1992 में सार्वजनिक वितरण प्रणाली को और अधिक सुदृढ तथा सुप्रवाही बनाने और पहाड़ी, सुदूरवर्ती एवं दुर्गम क्षेत्रों तक विस्तार करने की दृष्टि से आर्थिक रूप से पिछड़े आबादी वाले क्षेत्रों के लिए पुनर्गठित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (आरपीडीएस) की शुरुआत किया गया। इस योजना के तहत 1775 ब्लाकों को शामिल किया गया था, जहां सुखा प्रवण क्षेत्र कार्यक्रम, एकीकृत जनजातीय विकास परियोजना, मरुस्थल विकास कार्यक्रम और विशेष लक्ष्य हेतु राज्य सरकारों के परामर्श से पहचान किये गये कुछ पहाड़ी क्षेत्रों जैसे क्षेत्र विशिष्ट कार्यक्रम कार्यान्वित किये गये

थे। इस योजना के तहत वितरण हेतु खाद्यान्न केन्द्रीय निर्गम मूल्य से 50 पैसे कम मूल्य पर जारी किये गये थे, और वितरित होने वाले खाद्यान्न की मात्रा 20 किलोग्राम प्रति कार्ड तक थी।

इस योजना के तहत सार्वजनिक वितरण प्रणाली की बुनियादी संरचना का निर्माण के लिए 50 प्रतिशत सब्सिडी और 50 प्रतिशत ऋण पर प्रस्तावित किया गया था। इस योजना के तहत, चयनित ब्लाकों को कम कीमत पर वितरित होने वाली खाद्यान्न (गेंहू और चावल विशेष रूप से) का आवंटन राज्यों को किया जाता था। आरपीडीएस के ब्लाकों को केन्द्रीय निर्गम मूल्य से कम मूल्य पर 50 रूपये प्रति क्विंटल से खाद्यान्न का आवंटन केंद्र के द्वारा किया जाता था। राज्य सरकारों को यह सुनिश्चित करना पड़ता था कि इन ब्लाकों में इन वस्तुओं की खुदरा कीमतें केन्द्रीय निर्गम मूल्य (सेंट्रल इशू प्राइस) की तुलना में 25 पैसे प्रति किलोग्राम से अधिक न हो।

आरपीडीएस योजना, सार्वजनिक वितरण प्रणाली के वितरित होने वाले खाद्यान्न की लाभकारियों तक ही प्रभावी रूप से खाद्य–सुरक्षा पहुचं को सुनिश्चित करने के मकसद से शुरू किया गया था, जिसके तहत राज्य सरकार को चिन्हित क्षेत्रों में उचित दर की दुकान तक खाद्यान्न की डिलीवरी करना, छूटे हुए परिवारों को अतिरिक्त राशन कार्ड्स उपलब्ध करवाना, अतिरिक्त उचित दर की दुकान, खाद्यान्न की स्टोरेज क्षमता जैसे अनिवार्य बुनियादी ठाचें की व्यवस्था करना और अतिरिक्त वस्तुओं जैसे– नमक, दाल, खाने के तेल आदि का सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत वितरण करने की जिम्मेदारी थी।

लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (टीपीडीएस)

सार्वजनिक वितरण प्रणाली अपने मूल रूप में गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन व्यतीत कर रहे परिवारों को सहायता देने में असफल रहने, इसके शहरी पूर्वाग्रह, राज्यों, जहाँ ज्यादातर गरीब ग्रामीण हैं, में बहुत मामूली कवरेज और परिवहन के लिए पारदर्शिता और जवाबदेह प्रबंधकों की कमी के कारण बडे पैमाने पर आलोचना का शिकार हुई हैं (योजना आयोग, 2002)। वर्ष 1996 में आयोजित विश्व खाद्य परिषद में 185 देशों के साथ भारत ने हस्ताक्षर किया, जिसमें 'सभी के लिए खाद्य सुरक्षा' को सुनिश्चित करने के लिए प्रतिबधता दर्ज करने का प्रयास किया गया (वर्ल्ड फूड समिति, 1996)। जुलाई, 1996 में ही भारत की राजधानी (नई दिल्ली) में 'आवश्यक न्यूनतम सेवाएँ' पर आयोजित मुख्यमंत्रियों की सम्मेलन हुई, जिसमें प्रभावी सार्वजनिक वितरण प्रणाली की शुरू करने की सिफारिश की गयी तथा इसके लिये पुनर्गठित सार्वजनिक वितरण प्रणाली को लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली में परिवर्तित किया गया।

1 जून, 1997 को लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (लक्षित पीडीएस) पूरे देश के लिए लागू किया गया। लक्षित पीडीएस गरीबी रेखा से नीचे (बीपीएल) जीवन व्यतीत कर रही गरीब आबादी को विशेष राशन कार्ड जारी करते हुए, उनको किफायती दर पर 10 कि.ग्रा. प्रत्येक महीने अनाज प्राप्त करने का हकदार बनाया गया। अतएव, लक्षित पीडीएस योजना में 'सभी क्षेत्रों में गरीब' पर जोर दिया, जो अपने पूर्ववर्ती आरपीडीएस, 'गरीब क्षेत्रों में सभी' से विपरीत योजना थी। पीडीएस के तहत, केंद्र व राज्य सरकारों के सयुंक्त उत्तरदायित्व से परिचालित होती है। जहाँ केंद्र सरकार की जिम्मेदारी खाद्यान्न की खरीदी करना, स्टोरेज, परिवहन करने तथा खाद्यान्न का आवंटन करना हैं, वहीं दूसरी ओर राज्य सरकारें गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों की पहचान करने , राशन कार्ड जारी करने तथा उचित दर की दुकानों के माध्यम से समाज के कमजोर व्यक्तियों को किफायती दर पर अनिवार्य वस्तुओं का वितरण तथा राज्य सरकारें सार्वजनिक वितरण प्रणाली के बेहतर निगरानी करने के लिए जिम्मेदार हैं।

लक्षित पीडीएस के अंतर्गत, राज्य सरकारें अनाजों का उचित दर की दुकनों से पारदर्शिता और जवाबदेह तरीके से वितरण करने के लिए भी जिम्मेदार हैं। इस योजना की जब शुरुआत हुई, तो उस समय लगभग 72 लाख टन खाद्यान्न का वार्षिक वितरण करने के लिए कुल लगभग 6 करोड़ गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली आबादी को किफायती दर पर खाद्यान्न पाने के लिए हकदार बनाया गया था (योजना आयोग, 2002)। इस योजना के तहत तीन प्रकार के विशेष राशन कार्ड प्रचलित हैं, अर्थात् गरीबी रेखा के ऊपर के लिए (एपीएल), गरीबी रेखा के नीचे के लिए (बीपीएल) तथा अन्त्योदय अन्न योजना के लिए (एएवाई अर्थात् निर्धनतम) राशन कार्ड जारी किया जाता हैं। लक्षित पीडीएस 1 जून, 1997 से दिल्ली, पंजाब, गोवा, हरियाणा, त्रिपुरा व केंद्र संघ शाषित राज्य–लक्ष्यदीप को छोड़कर उत्तर प्रदेश सहित देश अन्य सभी भागों में कार्यान्वित हो चुकी थी। वर्ष 1999 तक यह प्रणाली दिल्ली सहित देश के सभी भागों में लागू हो चुकी थी।

राष्ट्रीय खाद्य–सुरक्षा अधिनियम–2013

हाल ही में गत 10 सितम्बर, 2013 को कांग्रेस द्वारा चलाई जाने वाली संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सरकार के दूसरे कार्यकाल में "अधिकार–आधारित खाद्य–नीति" के रूप में भारतीय संसद के द्वारा 'राष्ट्रीय खाद्य–सुरक्षा अधिनियम–2013' पारित किया गया। इस अधिनियम का मुख्य लक्ष्य– "गरीब परिवार (हाउसहोल्ड) को सम्मानपूर्ण जीवन जीने के साथ उचित दर पर पर्याप्त मात्रा में गुणवत्तापूर्ण भोजन उपलब्ध करने हेतु वैधानिक अधिकार प्रदान करता हैं" (भारत सरकार– राजपत्र, 2013) । इस अधिनियम के तहत, ग्रामीण भारत की 75 प्रतिशत आबादी और शहरी क्षेत्र की 50 प्रतिशत आबादी को कवर किये जाने का प्रावधान किया गया हैं, जिसमें पात्र–गृहस्थियों के प्रत्येक व्यक्ति को प्रत्येक महीने 5 किलोग्राम खाद्यान्न और अन्त्योदय अन्न योजना के लिए 35 किलोग्राम खाद्यान्न पाने के लिए अधिकार अनुबंधित किया गया गया हैं (भारत का राजपत्र, 2013)।

निष्कर्ष

भारत में खाद्य नीति का विकास कई महत्वपूर्ण सन्दर्भों के अंतर्गत हुई है, इन संदर्भों में प्रमुख रूप से देश में कुपोषण, गरीबी, जीवनयापन के स्तर का आभाव, तथा भूख की समस्यायें रही है। इस शोध प्रत्र का उद्देश्य भारत की खाद्य नीति के एतिहासिक विकास का विवेचनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन करना है। देश में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का अध्ययन अभी तक शोध की दृ ष्टी से गरीबी उन्मूलन, सोशल सेफ्टी नेट (सामाजिक सुरक्षा जाल), भुखमरी की समस्या के निस्तारण एवं आवश्यक पोषणाहार की पँहुच बनाये रखने, खाद्य वस्तुएं के मूल्यों में स्थिरता लाने तथा संरचनात्मक समायोजन आदि की अवधारणा एवं खाद्य सुरक्षा के पहलुओं के इर्दगिर्द दिखाई पड़ता हैं।देश की संसद ने वर्ष 2013 में खाद्य सुरक्षा अधिनियम पारित कर देश में समस्त नागरिकों के भोजन के अधिकार को वैधानिकता प्रदान करती है, हालाँकि की देश की खाद्य नीति का इतिहास बहुत पुराना है, इसकी जड़ें ब्रिटिश शासन के दौरान वर्ष 1939–42 में खोजी जा सकती है।

सन्दर्भ

1. कुमार, प्रमोद. टार्गेटेड पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम: परफॉरमेंस एंड इनेफ्फीसीएनसीज,अकादमिक फाउंडेशन, न्यू दिल्ली 2010, 44.
2. नारायणन, सुधा. अ केस फॉर रेफ्रामिंग द कैश ट्रान्सफर डिबेट इन इण्डिया, इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीक्ली, 21 मई, 2011, 41-47.
3. मूइज, जोस. फ़ूड एंड पॉवर इन बिहार एंड झारखण्ड: पीडीएस एंड इट्स फंक्शनिंग, इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीक्ली, 25 अगस्त, 2001, 3289-95.

4. झा & श्रीनिवासन. टेकिंग द पीडीएस टू द पुअर: डायरेक्शन फॉर फ़रदर रिफार्म, इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीक्ली, 29 सितम्बर, 2001, 3779.
5. लोक सभा. अतारांकित प्रश्न संख्या-256, उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय, जवाब दिया गया 26 फरवरी, 2013.
6. भारत का राजपत्र, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा अधिनियम-2013, विधिक और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार, 2013. http://dfpd.nic.in/fcamin/FSBILL/Rajpatra.pdf, एक्सेस 23 अप्रैल, 2014.
7. मूइज, जोस. फूड पॉलिसी एंड पॉलिटिक्स: द पॉलिटिकल इकॉनोमिक ऑफ़ द पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम इन इण्डिया, जर्नल ऑफ़ पेअसंत स्टडीज, वोल 1998;25(2):77-101
8. मजूमदर, भास्कर. पॉलिटिकल इकॉनमी ऑफ़ पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम इन इण्डिया, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, न्यू दिल्ली 2009.
9. भारत सरकार. खाद्यान्न जाँच समिति की प्रतिवेदन, 1957. खाद्य और कृषि मंत्रालय (खाद्य विभाग) 1957.
10. योजना आयोग मूल्यांकन. परफॉरमेंस इवाल्यूशन ऑफ़ टार्गेटेड पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम, डिस्कशन पेपर, प्रोग्राम इवाल्यूशन ऑर्गेनाइजेशन, योजना आयोग, भारत सरकार 2005.
11. राधाकृष्णा एवं सुब्बाराव. इण्डियाज पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम: अ नेशनल एंड इंटरनेशनल पर्सपेक्टिव, वर्ल्ड बैंक डिस्कशन पेपर संख्या. 380, वाशिंगटन डी.सी., वर्ल्ड बैंक 1997.
12. एफएओ, डब्लूएफपी, आईएफएडी, द स्टेट ऑफ़ फ़ूड इन्सिक्यूरिटी इन द वर्ल्ड-2012: इकॉनोमिक ग्रोथ इज नेसेसरी बट नॉट सफ़्फ़ीएन्ट टो अस्सिलिरेट रिडक्शन ऑफ़ हंगर एंड मॉलनुट्रीशन, रोम, एफएओ 2012.
13. ब्रीफिंग पेपर. ऑफ़ द ग्लोबल हंगर एंड फ़ूड सिक्यूरिटी आफ्टर द वर्ल्ड समिट, ओवरसीज़ डेवलपमेंट इंस्टिट्यूशन 1997.
14. मूइज, जे. इज देयर एन इन्डियन पॉलिसी प्रोसेस? एन इन्वेस्टीगेशन इंटू टू सोशल पॉलिसी, सोशल पॉलिसी & एडमिनिस्ट्रेशन 2007;41(4):323-338.
15. Gupta AK, Saxena A. “Implementation of Reforms InPublic Distribution System (PDS): Case Study”.Asian Journal of Social Sciences and Humanities 2015, 5(11).
16. Gupta AK, Saxena A. “Significance of Public Distribution System (PDS) In Uttar Pradesh (UP)”. TheInternational Journal of Management and Social Science Research of 2014, III(11).
17. Gupta AK. “Public Policy as a Process: In the Special Reference to the Food Policy of Uttar Pradesh”. International Journal of Research and Analytical Reviews (IJRAR). 2019; 6(2):852-859.